6

शिक्षा का अधिकार अधिनियम-2009 के क्रियान्वयन में गैर-सरकारी संगठनों की भूमिका

मंजू देवी*

सरकार के विभिन्न कार्यक्रमों एवं नीतियों के क्रियान्वयन के लिए ज़रूरी है कि सरकारी संगठनों के साथ ही साथ गैर-सरकारी संगठन भी अपनी भूमिका का निर्वहन करें, तभी कोई भी कार्यक्रम एवं नीति सतही स्तर पर आमजन को लाभान्वित कर पाएगी। शिक्षा का अधिकार अधिनियम-2009 एक ऐसी नीति है जिसे आमजन तक ले जाने की संपूर्ण ज़िम्मेदारी सरकारी एवं गैर-सरकारी संगठनों की है। उक्त आलेख इसी परिपेक्ष्य में गैर-सरकारी संगठनों की भूमिका को रेखांकित करता है।

शिक्षा का अधिकार अधिनियम-2009 के क्रियान्वयन में गैर-सरकारी संगठन (NGO) की महत्वपूर्ण भूमिका है। जैसा कि सभी लोग जानते हैं, प्राथमिक स्तर पर शिक्षा की दशा जैसी होनी चाहिए, वैसी नहीं है। किसी भी मानव समाज में शिक्षा का बहुत महत्वपूर्ण स्थान होता है। शिक्षा मानव के विकास का मूल साधन है। मानव जीवन में प्राथमिक शिक्षा का बहुत ही महत्त्व है। यह सत्य है कि मनुष्य के व्यक्तित्व के निर्माण में प्रारंभिक जीवन में उसे दी गई शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान है।

शिक्षा का अधिकार अधिनियम-2009 में स्पष्ट रूप से लिखा गया है कि भारत के 6 से 14 वर्ष आयु वर्ग के बीच आने वाले सभी बच्चों को नि:शुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा दी जाएगी। नि:शुल्क से तात्पर्य है कि किसी भी बच्चे द्वारा कोई फ़ीस/शुल्क नहीं लिया जाएगा, जो कि उसकी प्रारंभिक शिक्षा को पूर्ण करने में बाधक हो। अनिवार्य से तात्पर्य है 6 से 14 वर्ष के सभी बच्चों को शत-प्रतिशत नामांकन, शत-प्रतिशत उपस्थिति तथा शत-प्रतिशत बच्चों को प्रारंभिक शिक्षा पूर्ण कराने की संवैधानिक अनिवार्यता राज्य सरकार की है।

शिक्षा का अधिकार अधिनियम-2009 में स्पष्ट रूप से उल्लेख है कि प्राथमिक शिक्षा खत्म होने से पहले किसी भी बच्चे को रोका नहीं जायेगा और न ही उसे स्कूल से निकाला जाएगा। दुर्भाग्य से ऐसा हो नहीं पाता। यद्यपि

* *एसोसिएट प्रोफ़ेसर* (मनोविज्ञान), काशी नरेश स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ज्ञानपुर,संत रविदास नगर, भदोही, वाराणसी, उत्तर प्रदेश

सरकार ने स्कूलों और शिक्षकों को बहुत-सी सुविधाएँ दी हैं, लेकिन भारतवर्ष में जिस तरह की सामाजिक विषमताएँ हैं, वहाँ बच्चा कहीं-न-कहीं उस भेदभाव का शिकार हो जाता है। समाज में फ़ैले हुए भेदभाव को कम करने में गैर-सरकारी संगठन महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकते हैं, क्योंकि गाँवों में यह देखा जाता है कि अनुसूचित जाति एवं जनजाति के बच्चों के साथ अन्य जाति के बच्चे और अध्यापक भेदभाव करते हैं और उनके साथ विद्यालय में बैठकर पढ़ने से मना कर देते हैं। ऐसी स्थिति में गैर-सरकारी संगठनों की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण हो जाती है। वे स्कूलों में जाकर यह बता सकते हैं कि इस तरह का भेदभाव गलत है तथा सभी बच्चे एक समान हैं। समाचार पत्रों में यह खबर भी आती रहती है कि किसी विशेष जाति का होने के कारण बच्चे के साथ भेदभावपूर्ण व्यवहार किया गया। यदि कहीं भी भेदभावपूर्ण व्यवहार हो तो उसे रोकने के लिए गैर-सरकारी संगठनों तथा पूरे समुदाय को आगे आना होगा।

शिक्षा का अधिकार अधिनियम-2009 में आर्थिक रूप से कमज़ोर समुदायों के लिए सभी निजी स्कूलों में कक्षा-1 में दाखिला लेने के लिए 25 फीसदी आरक्षण की बात की गई है। गैर-सरकारी संगठनों की इस मुद्दे पर सबसे महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है, क्योंकि कोई भी निजी स्कूल बिना दबाव के 25 प्रतिशत आर्थिक रूप से कमज़ोर बच्चों को एडमिशन नहीं देगा। अगर निजी स्कूल अपनी मनमानी के लिए स्वतंत्र हैं, और सरकारें अगर ऐसे स्कूलों पर किसी भी तरह का नियंत्रण स्थापित नहीं कर सकतीं तो शिक्षा के अधिकार कानून का उन बच्चों के लिये क्या महत्त्व रह जायेगा? शिक्षा के अधिकार अधिनियम में स्पष्ट उल्लेख है कि किसी भी स्कूल में बच्चों की प्रवेश परीक्षा नहीं ली जायेगी तथा किसी भी तरह का डोनेशन नहीं लिया जायेगा तथापि ऐसे स्कूल सारे नियमों को ताक पर रखकर प्रवेश परीक्षा ले रहे हैं तथा बड़े नामी-गिरामी स्कूलों में डोनेशन के बिना एडमिशन नहीं हो रहे हैं। अगर कोई भी व्यक्ति या संगठन इसके विरुद्ध आवाज़ उठाता है तो उनके पास उसकी आवाज़ को दबाने के हजारों उपाय होते हैं। गैर-सरकारी संगठन (NGO) इस मुद्दे को उठाने तथा स्कूलों पर दबाव बनाने का काम आसानी से कर सकते हैं। यदि निजी स्कूल फिर भी नहीं मानें तो गैर-सरकारी संगठन ऐसे स्कूलों की मान्यता रद्द करने के बारे में सरकार को लिख सकते हैं।

सामाजिक नागरिक संगठनों के मंच आर.टी.ई. फ़ोरम की एक रिपोर्ट के मुताबिक राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी, केंद्र राज्य सहयोग का अभाव, स्कूलों और अध्यापकों की कमी ऐसे कारण हैं, जिनके चलते शिक्षा के अधिकार कानून का फायदा ज़रूरतमंद बच्चों को नहीं मिल पा रहा है। इस कानून में स्पष्ट रूप से पच्चीस प्रतिशत वंचित, कमजोर वर्ग के बच्चों को निजी स्कूल में मुफ्त शिक्षा पाने का अधिकार दिया गया है, लेकिन पूरे देश में एक भी स्कूल ऐसा नहीं है, जिसने इस नियम का पालन करने में अगुवाई की हो। शिक्षा का अधिकार अधिनियम-2009 लागू होने के बाद भी कोई आँकड़ा अभी तक उपलब्ध नहीं है कि

निजी स्कूलों में कितने प्रतिशत वंचित वर्ग के बच्चे पढ़ रहे हैं। गैर-सरकारी संगठनों (NGO) को सरकार को स्वयं आगे आकर इन स्कूलों में मॉनीटरिंग के लिए भेजना चाहिए, ताकि निजी स्कूलों की तानाशाही को रोका जा सके।

कहीं-कहीं तो सरकारी प्राइमरी विद्यालयों की स्थिति बहुत खराब है। एक तो उनके पास स्कूल के लिए इमारतें, कमरे, कुर्सी, मेज यहाँ तक कि चॉक का भी अभाव है तो दूसरी ओर शिक्षकों का अपने ही स्कूल तथा बच्चों की पढ़ाई के प्रति रुझान बहुत कम है। बच्चा (लड़का/लड़की) क्या पढ़ रहा है या क्या सीख गया या किस बच्चे में क्या सीखने की क्षमता है, शिक्षकों के पास यह सोचने की फ़ुर्सत ही नहीं है। देश के स्कूलों में ऐसे बहुत से शिक्षक मिल जायेंगे, जिन्हें केवल अपने वेतन से मतलब है। शिक्षकों को अपने कर्तव्यों के प्रति जागरूक करने का काम गैर-सरकारी संगठन अच्छी तरह से कर सकते हैं। शिक्षा का अधिकार अधिनियम-2009 में शिक्षा की गुणवत्ता में अनिवार्य सुधार की बात की गई है, लेकिन बहुत दुख के साथ कहना पड़ रहा है कि स्कूलों में शिक्षकों की कमी अभी भी बहुत ज़्यादा है। कानून की निगरानी का दायित्व राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग को सौंपा गया है, लेकिन आयोग को अपने एक साल के आकलन में निराशा ही प्राप्त हुई है।

आज मुख्य सवाल शिक्षा की गुणवत्ता का है। जितना ज़रूरी यह है कि सभी बच्चों को स्कूल भेजा जाए, उतना ही ज़रूरी यह भी है कि बच्चे को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा दी जाए। बच्चे सचमुच कितना सीख रहे हैं, इसका आकलन करने में गैर-सरकारी संगठन महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। सिर्फ सबको शिक्षा देने की औपचारिकता से उद्देश्यों को हासिल नहीं किया जा सकता है।

सरकार ने सुविधाएँ बहुत-सी दी हैं, लेकिन आज भी समाज में जागरुकता की कमी है। जब तक अभिभावक यह नहीं समझेंगे कि बच्चे का पढ़ना बहुत ज़रूरी है, तब तक शिक्षा के अधिकार कानून को प्रभावी नहीं बनाया जा सकता है। गैर-सरकारी संगठन समाज में शिक्षा के प्रति जागरुकता लाने में सहयोग कर सकते हैं। एन.जी.ओ. प्रत्येक गाँव बस्ती, मुहल्ले में जाकर अभिभावकों को अपने बच्चों को स्कूल भेजने के लिए प्रोत्साहित कर सकते हैं। एक ओर देश की गरीबी, दूसरी ओर गाँवों में लोगों का यह सोचना कि बच्चे पिता के साथ रहकर काम करेंगे तो कुछ पैसे आएँगे, जिससे वे अपने बच्चों को स्कूल नहीं भेजते हैं। ऐसी सोच के कारण शिक्षा का स्तर देश में वैसा नहीं हो पाया है, जैसा होना चाहिए। गैर-सरकारी संगठन अभिभावकों को समझा सकते हैं कि शिक्षा का जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है तथा शिक्षा के द्वारा हम दूसरों के शोषण से बच सकते हैं। गैर-सरकारी संगठन कुछ संबंधित कार्यक्रम जैसे-स्वास्थ्य, पर्यावरण जागरुकता के कार्यक्रम चलाकर यह दिखा सकते हैं कि शिक्षित होने के कारण स्वास्थ्य की देखभाल भी हम ठीक तरह से कर सकते हैं।

शिक्षा का अधिकार अधिनियम में स्पष्ट लिखा गया कि बच्चों को शारीरिक दंड देना एवं मानसिक रूप से प्रताड़ित करना प्रतिबंधित है, लेकिन प्राय: समाचार पत्रों में यह पढ़ने को मिलता है कि अमुक स्कूल में बच्चे को शिक्षक द्वारा इतना पीटा गया कि बच्चे का हाथ टूट गया या उसकी आँख फूट गई। शिक्षकों को ऐसा कार्य नहीं करना चाहिए। गैर-सरकारी संगठन शिक्षकों को समझा सकते हैं कि उन्हें किसी भी बच्चे को प्रताड़ित नहीं करना चाहिए। बच्चा चाहे अपना हो या किसी और का, उसके साथ मानवीय व्यवहार करना सभी का कर्तव्य है।

शिक्षकों को गैर-शिक्षकीय कार्य में लगाना प्रतिबंधित कहा गया है (कुछ कार्यों को छोड़कर), लेकिन शिक्षक न जाने कौन-कौन से कार्यों में लगे हुए हैं। जैसे-पल्स पोलियो, राशन कार्ड, निर्वाचन नामावली बनवाना आदि न जाने कितने कार्य हैं, जिसे शिक्षकों को करना पड़ता है, जिससे उनका मनोबल प्रभावित होता है। सरकार ने भी अप्रशिक्षित शिक्षकों की नियुक्ति अलग-अलग राज्यों में अलग-अलग नाम से की है। जैसे-शिक्षा मित्र, शिक्षा सहायक। कहीं-कहीं तो देखा गया है कि कुछ पैसे पाने वाले इन शिक्षा मित्रों पर पूरे विद्यालय की ज़िम्मेदारी होती है। ऐसी स्थिति में गुणवत्तापूर्ण शिक्षा कैसे प्राप्त की जा सकती है? शिक्षा का अधिकार अधिनियम में निश्चित शिक्षक-छात्र अनुपात की सिफारिश की गई है, जबकि दो-ढाई हजार रूपया पाने वाला शिक्षा मित्र कक्षा 1 से 5 तक की सभी कक्षाओं को अकेले कैसे सँभाल सकता है? यद्यपि स्वतंत्रता के बाद सरकार द्वारा लाया गया शिक्षा का अधिकार अधिनियम-2009 एक महत्वपूर्ण अधिनियम है तथा प्राथमिक विद्यालयों की स्थिति के मूल्यांकन के लिए गैर-सरकारी संगठन प्रत्येक स्तर पर महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकते हैं। जैसे-विद्यालयों में सफाई की व्यवस्था क्या है? झाड़ू कौन लगाता है? शौचालय की व्यवस्था कैसी है? शिक्षक के आने और जाने का समय क्या है? वे पढ़ाते हैं या केवल रजिस्टर पर हस्ताक्षर करके चले जाते हैं? आदि।

उत्तर प्रदेश के कई स्कूलों में जब सर्वेक्षण कर रही थी तो अनुसूचित जाति के बच्चों ने कहा कि मास्टर जी हम लोगों से क्लास रूम में झाड़ू लगवाते हैं। आखिर अध्यापकों की मानसिकता में बदलाव कैसे आयेगा? स्कूलों में सफाई की व्यवस्था की ज़िम्मेदारी किसकी है, यह देखना महत्वपूर्ण है। गैर-सरकारी संगठन इन सभी बिंदुओं पर सर्वेक्षण करके सरकार को अपनी रिपोर्ट दे सकते हैं कि स्थिति को और अच्छा कैसे बनाया जा सकता है?

प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षकों का समय से आना अति आवश्यक है। इसके लिए एक पूरी नीति तैयार करनी होगी। नियुक्ति के समय शिक्षक अपना पता उसी जनपद का दे देते हैं, जहाँ उन्हें नियुक्ति चाहिए, लेकिन उनका उन गाँवों से दूर-दूर तक रिश्ता नहीं होता। शहरी समाज में पले-बढ़े इन शिक्षकों का ग्रामीण बच्चों से कोई भावनात्मक लगाव नहीं होता है। वे शहर में रहते हैं और सत्तर-अस्सी किमी. की

दूरी तय करके किसी तरह विद्यालय पहुँचते हैं। क्या वे समय से विद्यालय पहुँच पाते होंगे? फिर उन्हें वापस अपने घर आने की जल्दी रहती है। सरकार को ऐसे शिक्षकों की नियुक्ति करने के पहले ही सोचना होगा कि विद्यालयों में इनका कितना सहयोग होगा। इन सब समस्याओं से निपटना बहुत चुनौती भरा काम है। नियुक्ति उन्ही शिक्षकों की करनी चाहिए जिनका आवास दस से बीस किलोमीटर के बीच हो तथा वे आस पास के गाँवों के ही हों। अच्छा तो यही है कि आस-पास के गाँवों के बी.ए., एम.ए. पास लोगों को नियुक्त कर लिया जाए और फिर दो वर्ष की ट्रेनिंग सेंटर भी ग्रामीण क्षेत्र में ही हो। प्रत्येक विद्यालय का मूल्यांकन हर छः माह में करना अनिवार्य कर देना चाहिए। शिक्षकों के कर्तव्य के साथ उनकी समस्याओं पर भी प्राथमिकता के साथ विचार-विमर्श होना चाहिए। गैर-सरकारी संगठनों का यहाँ पर सहयोग लिया जा सकता है।

शिक्षा का अधिकार अधिनियम में कमज़ोर एवं वंचित वर्ग के बच्चों पर विशेष ध्यान देने की बात की गई है। ऐसे बच्चों के लिए एक निगरानी समिति का गठन गैर-सरकारी संगठनों के द्वारा किया जा सकता है। कमज़ोर एवं वंचित वर्ग के बच्चे जो कि गरीबी रेखा से नीचे का जीवन-यापन कर रहे हैं, उनके लिए शिक्षा अति आवश्यक है। बहुत-से बच्चे जिनके माता-पिता घूमंतू तरह का जीवन जीते हैं, जिनका कोई स्थाई घर नहीं है या वे बच्चे जो ट्रेनों में सामान बेचते हैं, झाड़ू लगाते हैं या वे बच्चे जिनके पिता किसी छोटे-मोटे अपराध में जेल चले गए हैं तथा वे बच्चे जो सुबह होते ही बोरा लेकर कूड़ा बीनने निकल जाते हैं, उन बच्चों के लिए शिक्षा और स्कूल तो एक स्वप्न जैसा है। ऐसे बच्चों को स्कूल में दाखिला दिलवाने का काम गैर-सरकारी संगठन अच्छी तरह से कर सकते हैं। एक तो उनके अभिभावकों को जागरूक करके, दूसरे उनकी दिनचर्या के अनुसार सरकार से कहकर स्कूल खुलवाकर। शिक्षा का अधिकार अधिनियम के प्रभावी क्रियान्वयन हेतु सलाह देने के लिए राज्य सलाहकर परिषद् के गठन की बात कही गई है। राज्य सलाहकार परिषद् और गैर-सरकारी संगठन मिलकर कार्य कर सकते हैं। अधिनियम में कहा गया है कि 6 से 14 वर्ष के ऐसे बच्चे जो अभी तक स्कूल में दर्ज नहीं हैं, की पहचान करना ताकि कोई भी बच्चा शिक्षा से वंचित नहीं रहे, लेकिन बहुत दुख की बात हैं कि आज भी बहुत से बच्चे स्कूल नहीं जा रहे है। ऐसे बच्चों को स्कूलों में दाखिला दिलाना चुनौती भरा कार्य है।

❑❑❑